हर आत्मा में परमानन्द का वास

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,

पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

आत्मा ही परमात्मा बनती है। आत्मा की तीन अवस्थाएं हैं। पहली अवस्था जीवात्मा है। जीवात्मा अज्ञान के वशीभूत होकर विषयानन्द का भोग करती है। अज्ञान में लिप्त होकर वह मेरा और मैं तक सीमित रहता है। ऐसी सोच स्वार्थ है। यह मेरा घर है, मैं बहुत धन कमाता हूं, समाज में मेरी पद और प्रतिष्ठा है इत्यादि चिंतन जीवात्मा में होता है। जीवात्मा अपने को कर्त्ता मानता है। जीवात्मा पंचेन्द्रियों के सुखों तक सीमित रहता है। संसार के सुख साधन है साध्य नहीं। धन ही सब कुछ नहीं है। इससे शान्ति नहीं मिल सकती। केवल किसी प्रकार जीवन का निर्वाह हो सकता है।

जीवात्मा से परे अन्तरात्मा है। अन्तरात्मा चार्ज नहीं होता वह डिस्चार्ज रहता है। वहां नये कर्म का बन्धन नहीं होता। अन्तरात्मा में प्रायश्चित होता है। आलोचना, प्रतिक्रमण, प्रत्याख्यान का भाव रहता है। जीवात्मा और अन्तरात्मा से परे परमात्मा है। परमात्मा शुद्ध आत्मा है। ये स्वभाव में रमण करता है। परमात्मा अजर–अमर अविनाशी है, परमात्मा सच्चिदानन्द स्वरूप है। जीवात्मा में परमात्मा बनने की शक्ति है। कर्मों के बन्धन को काटकर जीवात्मा परमात्मा बन जाता है। कर्मों का अर्जन जीव में राग–द्वेष उत्पन्न करता है। शरीर पंचभूतात्मक है। चेतना पंचभूतात्मक नहीं है। चेतना के कारण ही पंचभूतात्मक शरीर चेतनवत् प्रतीत होता है।

जैन दर्शन में जीवात्मा, अंतरात्मा और परमात्मा का अस्तित्त्व स्वीकृत है। जीवात्मा आत्मा की पहली कक्षा है। अंतरात्मा आत्मा की दूसरी कक्षा है। इसमें भेद ज्ञान प्राप्त हो जाता है। इसके उपलब्ध होने पर उसका प्रस्थान अपने देह मुक्त शरीर की ओर हो जाता है। परत्मात्मा आत्मा की सर्वोच्च कक्षा है। इसमें अपने मौलिक रूप में आत्मा अवस्थित हो जाता है। आत्मा में परमात्मा बनने की शक्ति है। यदि कोई अपनी समीक्षा करें और अवगुणों को निकाल दे तो आत्मा परमात्मा बन सकती है।

इस संसार में दो प्रकार के जीव है– 1. मुक्त जीव 2. संसारी जीव। मुक्त जीव को परमात्मा, ईश्वर, सर्व शक्तिमान, सिद्ध, शुद्ध जीव, आदि नाम से जाना जाता है। इन मुक्त जीवों के अतिरिक्त सभी जीव संसारी जीव हैं। जीव का संबंध सांसारिक जीवों के लिए प्रयुक्त किया जा रहा है। संसार में जितने शरीर हैं, उतने जीव हैं। जीव का लक्षण, उपयोगमय, कर्त्ता, स्वदेह परिणामी, संसारी रूप में बताया गया है। जीव का उपयोग लक्षण चेतना है। विश्व में कोई भी ऐसा जीव या प्राणी नहीं है, जिसमें चेतना विद्यमान न हो अर्थात अस्तित्व के रूप में प्रत्येक जीव चेतनयुक्त है।

समस्त जीवों में विकास की क्षमता समान होती है लेकिन पुरुषार्थ के कारण ही कम विकसित या अधिक विकसित जीव दिखाई देते हैं। सम्पूर्ण संसार जीवों से भरा है। संसार में जन्म लेने वाला जीव अज्ञान के कारण ऐसे कर्मों का अर्जन करता है जिसके कारण उसे कर्मों का बंधन होता है। इसलिए प्रत्येक जीव अपने कर्मो का स्वयं जिम्मेदार है और कर्म के परिणामों की भी जिम्मेदारी स्वयं उसकी है यह जीव का कर्त्ता–भोक्तापन की विशेषता है। कर्त्तृत्व व भोक्तृत्व संसारी जीव या जीवात्मा में ही पाया जाता है।

जैन दर्शन में षड्जीवनिकाय का सूक्ष्म विवेचन किया गया है। षड्जीवनिकाय के अन्तर्गत पृथ्वीकायिक, अप्कायिक, तेजस्कायिक, वायुकायिक, वनस्पतिकायिक और त्रसकायिक जीवों की गणना होती है। पृथ्वी ही जिनका शरीर है ऐसे जीवों को पृथ्वीकायिक जीव कहा जाता है। आज अनेक प्रकार के खनिज पदार्थों के लिए पृथ्वीकाय की हिंसा की जाती है। जल में रहने वाले जीव, जैसे मछली एवं अन्य प्राणी जलाश्रित जीव कहलाते हैं। अग्निकाय का असंयम करने से ऊर्जा के स्रोत कम हो रहे हैं। प्रकृति की दृष्टि में एक पौधे का जीवन भी उतना ही मूल्यवान है, जितना एक मनुष्य का है।

जिन जीवों में हलन–चलन एवं गमन की क्रिया होती है उन्हें त्रस जीव कहते हैं। जो संत्रस्त होते है, उद्विग्न होते हैं, संकुचित होते हैं, डरते हैं तथा त्रस आदि अवस्थाओं में जो इधर–उधर पलायन करते हैं, यह भी त्रस जीवों का लक्षण है। ये तीन प्रकार के है– सम्मूर्च्छनज, गर्भज, औपपातिक। रसज, संस्वेदज और उद्भिद् ये तीन सम्मूर्च्छनज हैं। सम्मूर्च्छनज का अर्थ है गर्भाधान के बिना ही यत्र–तत्र आहार ग्रहण कर शरीर का निर्माण

करना। अंड़ज, पोतज और जरायुज ये गर्भज जीव हैं। उपपात से जन्म लेने वाले देव और नारक औपपातिक कहलाते हैं।

जीवात्मा, अंतरात्मा और परमात्मा में कर्मों को लेकर भेद है। प्रत्येक शरीर में जीवात्मा व्याप्त है। अंतरात्मा सभी शरीरों में एक है। आत्मा पर जब कर्मों का आवरण पड़ता है तो आत्मा का प्रकाश अवरुद्ध हो जाता है। जब कर्मरज नष्ट हो जाता है तो आत्मा स्वप्रकाशी हो जाता है। स्वप्रकाशी आत्मा कर्मों के क्षीण होने पर परमात्मा बन जाता है। परमात्मा की अवस्था शैलेशी अवस्था है। इस अवस्था में आत्मा ज्ञान, दर्शन चारित्र और तप से कर्मों को क्षीण कर शुद्ध, बुद्ध, मुक्त बन जाता है। यही आत्मा का स्वाभाविक स्वरूप है। आत्मा अपने स्वाभाविक स्वरूप में अवस्थित हो जाता है तो वह मुक्त होकर परमात्मा बन जाता है।